विक्टोरियस पब्लिसर्ज़ (इंडिया)

डी-5 जी./एफ., ग्राऊंड फ्लोर
पांडव नगर, शांति नर्सिंग होम के नजदीक
(मदर डेयरी के सामने), दिल्ली-110092
ई-मेल: victoriouspublishers12@gmail.com
मोबाइल: +91-8826941497

शाखा कार्यालय

हाउस नं.-152, रोड नं.-12
पटेल नगर, हटिया, रांची-834003 (झारखण्ड)
मोबाइल- +91-9973032322

कॉपीराइट© संपादक

प्रथम संस्करण फरवरी 2017

ISBN 978-93-84224-86-8

मूल्य: 1195 रुपए मात्र

खण्डन: लेखकों द्वारा व्यक्त किए गए विचार उनके अपने हैं। किसी भी चूक या अनजाने में विचारों की त्रुटियों के लिए संपादक तथा प्रकाशक उत्तरदायी नहीं होगा।

©सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। इस प्रकाशन के किसी भी अंश को संपादक तथा प्रकाशक की अनुमति प्राप्त किए बिना किसी भी रूप, या किसी भी माध्यम से पुनर्प्रकाशित या प्रसारित नहीं किया जा सकता।

संत कवियों का स्त्री विषयक कृष्टिकोण

डॉ. गौरी त्रिपाठी

संत कवि हमारे हिन्दी साहित्य की बहुत बड़ी उपलब्धि हैं। इन संत कवियों को हम भक्तिकाल से जोड़ कर देखते हैं। संत कवियों की रचनाओं को लोग अपने-अपने नजरिए से पढ़ते हैं। संत कवियों का हिन्दी साहित्य में बहुत योगदान है। सामाजिक सरोकार इनकी रचनाओं का मुख्य विषय रहा है। 'कुछ विद्वान संत का अर्थ निरगुनपंथी साधू ही लगाते हैं। उधर गोस्वामी तुलसीदास जैसे सगुनपंथी कवि भी संत शब्द अपनाते हैं, अपने को उसी संत परंपरा का अनुयायी मानते हैं। संत शब्द से संसार त्यागी महात्मा का अर्थ लेना भी ठीक नहीं। संतों में बहुत-से गृहस्थ थे। संतों से केवल हिन्दू महात्माओं का बोध करना ठीक नहीं, इनमें अनेक मुसलमान थे जो इस्लाम की कट्टरता के भले ही विरुद्ध रहे हों, लेकिन उसे छोड़कर हिन्दू न हो गए थे। संतों से हम पुरुष कवियों या महात्माओं का ही बोध करें, यह भी उचित नहीं। यदि मीराबाई संत नहीं तो संत कौन है?'[1] संतों में स्त्री और पुरुष, संन्यासी और गृहस्थ, हिन्दू और मुसलमान सगुणवादी और निरगुनवादी दोनों हैं। संत कवि सगुण एवं निर्गुण धारा, स्त्री एवं पुरुष की सीमाओं से ऊपर उठकर हैं। मानवीयता एवं समाजिकता का आग्रह ज्यादा है इसलिए इन्हे संत कवि कहा गया है।

मध्यकाल का समाज स्त्री एवं पुरुष की बराबरी पर नहीं खड़ा था। वह सामंती समाज था। जाहिर है स्त्री एवं पुरुषों में विभेद था। स्त्री की ये स्थितियाँ संत कवियों की कविताओं में दिखाई पड़ती हैं। स्त्रियाँ भी मनुष्य हैं उनमें भी एक साथ वे खूबियाँ व कमियाँ होती हैं जो किसी भी जीवित मनुष्य में होती हैं। हम स्त्रियों को या तो देवी या फिर चरणों की दासी बना देते हैं। एक सामान्य मनुष्य की तरह स्त्री को क्यों नहीं समझ पाते हैं। स्त्रियों के प्रति यह दृष्टिकोण मध्य काल से लेकर अब तक है। अभी भी हम स्त्रियाँ कृष्टिकोण बदलने की ही वकालत कर रही हैं।

'संतों के लोकधर्म का महत्व क्या है? संतों का लोकधर्म सामंती व्यवस्था को दृढ़ नहीं करता, वरन उसे कमजोर करता है। सामंती व्यवस्था में धरती पर सामंतों का अधिकार था तो धर्म पर उन्हीं के समर्थक पुरोहितों का। संतों ने धर्म पर से पुरोहितों का यह इजारा तोड़ा। खासतौर से जुलाहों, कारीगरों, गरीब किसानों और अछूतों को सांस लेने का मौका मिला। यह विश्वास मिला कि पुरोहितों और शास्त्रों के बिना भी उनका काम चल सकता है। वर्गयुक्त समाज में बहुधा सामाजिक संघर्ष धार्मिक रूप ले लेते हैं।[2] संत कवियों के संदर्भ में स्त्रियों के दृष्टिकोण की बात करें तो यह बहुत सकारात्मक नहीं है। संत कवियों में मीरा का जो स्वर है क्या उस तक किसी भी संतकवि